आधी आबादी

डॉ. संदीप श्रीराम पाईकराव
डॉ. संतोष विजय येरावर

परिकल्पना

© सम्पादक

प्रथम संस्करण : 2018

मूल्य : 525

ISBN : 978-93-87859-84-5

शिवा नंद तिवारी द्वारा *परिकल्पना*, बी-7, सरस्वती कामप्लेक्स, सुभाष चौक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से प्रकाशित और शेष प्रकाश शुक्ला, गाजियाबाद-201010 से टाइप सेट होकर *काम्पैक्ट प्रिंटर्स, दिल्ली-110032 में मुद्रित*

उत्तर आधुनिकता : नारी-विमर्श 201
—एम. रामचन्द्रम
नारी स्वभाव के विभिन्न आयामों सफल प्रतीक : शीलवती 205
—ताल्ला निरंजन
हिन्दी साहित्य में ग्रामीण नारी की समस्याएँ 208
—डॉ. ई. राजा कुमार
हिन्दी साहित्य में चेतना युक्त नारी 211
—डॉ. ई. सुनीता
शिवानी की कहानियों में नारी पात्रों की मनःस्थिति 214
—प्रा. शेषगणी गफुरसाहेब
उषा यादव के साहित्य में नारी 219
—नितिन शेटी
समकालीन हिंदी कविता में अग्नि व्यक्त नारी संवेदना 227
—डॉ. संतोष विजय येरावार
नारी विमर्श की सशक्त हस्ताक्षर—मीराबाई 233
—श्रीमती मीरा मुण्डा

समकालीन हिंदी कविता में अभिव्यक्त नारी संवेदना

डॉ. संतोष विजय येरावार

समकालीन कविता में नारी संवेदना की सूक्ष्म अभिव्यक्ति हुई है। नारी की बेबसी का चित्रण कविता में हुआ है तो नारी के सशक्त, प्रभावी, विद्रोही, रूप का भी चित्रण हुआ है। समकालीन कविता के माध्यम से नवीन चेतना, सामाजिक एवं परिवार के बोझ से दबी हुई स्त्री को पुरुष मानसिकता के अभाव ग्रस्त बना दिया है। पुरुषों की शोषित, अहंकारी एवं दमनकारी मानसिकता को उघाड़कर स्त्रियों को सजग करने का प्रयास समकालीन कविता में किया गया है। अशिक्षा, अधंश्रद्धा, धर्म, रुढि, प्रथा एवं परंपरा के नामपर स्त्रियों को किस प्रकार दमन किया जा रहा है इस वास्तविकता को भी उघाडा है नारी के विविध रूप, नारियों की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक स्थिति को भी अभिव्यक्त किया गया है।

विकृत पारिवारिक संस्था में पुरुषों में नारी को भोग्या बनाकर, उसे प्रताडित एवं अपमानित किया है। प्रतिव्रता धर्म का उपदेश देकर तथा चरित्र का दुहाई देकर नारी को छला है। स्त्री शक्ति का गला घोटकर उनके अस्तित्व को अपने अधिन रखने का क्रुक्रम पुरुषों द्वारा किया जा रहा है जिस कारण स्त्रियों का जीवन अंधकारमय हो गया है। विवाहसंस्था ने तो पुरुषों को स्त्रियों का शोषण करने का अधिकार दिया हैं स्त्रियों की इस घुटन, त्रासदी और पीड़ा को भी समकालीन कविता में उघाड़ा है। स्त्रियों की इच्छाओं अपने सपनों और आकांक्षाओं का दमन कर पुरुषों ने उसे अपने निर्णयों के अधीन रखा हैं। स्त्री के अबला एवं सबला रूपों का चित्रण समकालीन कविता में अभव्यक्ति हुआ है।

स्त्री सदैव समाज और परिवार के दो पाटों में पिसती रहती है। समाज व्यवस्था और परिवार ने स्त्री को उचित स्थान नहीं दिया हैं। समाजद्वारा उसे प्रताडित और अपमानित किया जाता हैं तो परिवार द्वारा उसे सभी अधिकारों से वंचित रख पाता हैं। परिवार में स्त्री का अस्तित्व केवल कामकाज तक ही सीमित है। संपूर्ण परिवार

को संभालने की और सेना की जिम्मेदारी स्त्री की होती है। स्त्री को केवल उपभोग की वस्तु मात्र समझा जाता हैं। परिवार में उसे अवमानता, त्रासदी एवं विरोध तक सीमित रखा जाता है। उसकी सारी क्षमता, योग्यता, एवं सामर्थ्य चार दिवारों तक सीमित रह जाता है। स्त्री मुक्ति का स्वर ही उनके जीवन प्रकाशमय कर सकता हैं। ममता कालिया ने नारी अस्तित्व को लेकर खॉटी घरेलू औरत में कहां हैं–

"बस पिस कई पुदीने में/छन गई आटे में/वह कोना-कोना छटगई/
वह कमरा-कमरा बंट गई।"

उसने अपनी सारी प्रतिभा आलू-परवल में झोंक दी और सारी रचनात्मक रायते में घोल दी उसने स्वाद और सुंगध का संवत्सर रच दिया लेकिन पुरुष ने कभी नहीं कहा उसे शुक्रिया।

स्त्रियों को पुरुषी मानसिकता से संचलित दायरे में ही ज्ञापन करना पड़ता है। पुरुषी अंहकार उसे सदैव निरर्थक एवं निरुपयोगी समझता हैं। उसके साथ पुरुषों द्वारा ऐसा व्यवहार किया जाता हैं जैसे स्त्रियों का कोई स्वातंत्र अस्तित्व ही नहीं स्त्री तो केवल पुरुषों के उपभोग मात्र है यह मानसिकता स्त्रियों को अधिकारों से वंचित रखती है। स्त्री जब होनेवाले शोषण, अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाती है, तथा अपने अधिकारों की मांग पुरुषों से करती है तो उसपर कुल्टा, पतित, चरित्रहीन होने का आरोप लगाया जाता हैं ताकि वे अपने अधिकारों के प्रति सजग ही नहीं। स्त्री स्त्रतंत्रता की पतिवृत्ता के नाम पर नकारा जाता है इस वास्तविकता को 'स्त्रियां' कतिवा में 'अनामिका' जी ने उघाड़ा है।

"पढ़ा गया हमको/जैसे पढ़ा जाता है कागज/देखा गया हमको/जैसे कुप्त हो उनी दें/देखी जाती है कलाई घड़ी/अलस्सुबह अलमी बनने के बाद/सुना गया हमको /जैसे सुने जाते है फिल्मी गाने/भोगा गया हमको/जैसे सुने जाते है फिल्मी गाने/भोगा गया हमको/बहुत दूर के रिश्तेदारों के दुःख की तरह/एक दिन हमने कहा/हम भी इंसान हैं/चीखती हुई ची-चीं/दुःचरित्र महिलाएं दुःचरित्र महिलाएं/हे परम पंतिओं परम पुरुषों/बख्शों, बख्शों, अब हमें बख्शों।"

'स्त्रियां' कविता में स्त्री संवदेना को उघाड़ा हैं। स्त्री का वस्तु के समान उपभोग किया जाता है और उसे निरर्थक वस्तु के समान अडपयुक्त माना जाता हैं। स्त्री मन को समझने को उनके अस्तित्व को पहचान ने का प्रयास कभी पुरुषों ने किया ही नहीं। वह भी इंसान है, उसकी भी स्वतंत्र, संवदेना, विचार अस्मिता और आचार-विचार है, इस वास्तविकता का सदियों से पुरुषी अहंकार ने दमन किया है। स्त्री का स्वतंत्र कोई महत्व नहीं है। इस मानसिकता को रोपन करने में पुरुष सफल रहा है। स्त्रियां जब अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ती है या अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापन करना चाहती

है तो पुरुषी अहंकार बाधित हो जाता है। स्त्री जब मानवीय अधिकारों की चर्चा करती है तो पुरुष बेचैन हो जाता है और स्त्रियों पर लांछन लगाना प्रारंभ करता है।

पुरुषों ने स्त्री की उपयोगिता केवल रसोई और बिस्तर तक ही मानी है। इसके अलावा पुरुष स्त्री के विषय में कुछ जानता नहीं है और इससे परे उसे जानना भी नहीं चाहता है। स्त्री पुरुषों से प्रश्न करती है 'निर्मला पुतूल' के शब्दों में–

"क्या तुम जानते हो/पुरुष से भिन्न/एक स्त्री का एकांत?/अगर नहीं/तो फिर जानते क्या हो तुम/रसोई और बिस्तर के गणित से/परे/एक स्त्री के बारे में... ।"

परंपरा के नाम पर स्त्रियों का शोषण किया जाता हैं। मर्यादा सभ्यता एवं चरित्र के नाम पर उसे गुलाम बनाया जाता हैं। उनके साथ पशु और अमानवीय व्यवहार किया जाता है। सुबह दूध दोहन से लेकर रात बिस्तर तक स्त्रियों का भी दोहन किया जाता है। बालविवाह, सतीप्रथा, अनमेल विवाह, परायधन, आदि के नामपर स्त्रियों का दमन किया जाता है। अगर स्त्री अपने अधिकारों के प्रति आवाज बुलंद करे तो उसे बुलनासिनी, बच्चलन एवं चरित्रहीन कहां जाता है, इस वास्तविकता को 'रमणिका गुप्ता' जी ने अपनी कविता में उघाड़ा है–

"उसकी गुलामी को कहा/मर्यादा/हत्या को कुर्बानी/मौत को मुक्ति/जल जाने को सती/सौंदर्य को माया ठगनी/खुददारी को/कुलटा नटनी कुटनी/और न जाने क्या-क्या कहा।"

विवाहसंस्था में व्याप्त विकृतियों एवं विषमताओं भी स्त्री शोषण की उत्तरदायी है। दहेजप्रथा और स्त्री विषयक विषम मानसिकता के कारन स्त्री प्रताड़ता, अवमानना, त्रासदी एवं पीड़ा का शिकार होती है। स्त्री को विवाह के पश्चात सभी मानवीय अधिकारों से वंचित रखा जाता है। पति के परिवार के सभी सदस्यों को स्त्री शोषण का अलिखित अधिकार व्यवस्था ने दिया है। संपत्ती एवं संतती के कारन पत्नी का शोषण पति द्वारा किया जाता हैं। घर के वारिश के लिए एवं भ्रूणहत्या के लिए भी स्त्री को मजबूर किया जाता है। शरीर संबंधों के लिए पत्नी की सहमती की पति को कोई आवश्यकता नहीं होती है। पत्नी सहमत भी नहीं है तो पति जबरन शारीरिक भूख मिटाने का अधिकारी हैं। स्त्री शरीर के अस्तित्व को प्रजनन एवं शरीरसुख तक सीमित रखा गया हैं पुरुषी अहंकारी व्यवस्था का उद्घाटन 'मोनालिस' का शब्दों में–

"हिंसा से प्रेरित गर्भपात
आंखों के गिर्द काले निशान
और खून से लिथड़े होंठ
नीली खरोंचे और टुटी पसलियां

सब के सब शादी के पवित्र बंधन
और घर की सुरक्षा के दायरे में है
यह अलिखित सूचियां है।''

विवाह के पवित्र बंधन को प्रताड़ना शोषण एवं हिंसा का बंधन बनाया गया है। स्त्री के प्रति समाज के हीन भाव के कारण ही स्त्री भ्रूण हत्या में वृद्धी हो रही हैं। लड़की और लड़के बीच असमानता के भाव को उजागर करती 'रंजना जयस्वाल' की कविता–

''बेटे के पालन में
झुम रहा था झूनझूना
ताकि बेटा देखें
मुस्कराये
सिखे
हिलते-हिलते छलना
बेटी पैदा होते ही
जीन पर रख दी गयी।''

विडंबना यह है की आधुनिकता ने मानव को दानव बन दिया है। स्त्री–पुरुषों में भेद यह समाज के खोखले पन को दर्शाता है। पुरुषों की विकृत सोच को अभिव्यक्त करता हैं पुरुषों द्वारा संचलित व्यवस्था में स्त्री अपने-आप से जूझ रही है। व्यवस्था के घृणित परंपराओं में स्त्री पग-पग जल रही हैं। कर्तव्यों के दबाव में स्त्री घूटन भरा जीवन जीने को मजबूर हैं–

''अपने ही मुदे पर नाचती है यह
देह अपनी ही जलाकर जीती है
मोमबत्ती एक स्त्री का रूप है
कई करोड़ों मंदिरों में
यह जल रही है यह धूप है।''

नारी मोमबत्ती की तरह निरंतर जलती हैं और अपने परिवार का पालन-पोषण करती हैं फिर भी वह प्रताड़ित हैं यह हमारे समाज की वास्तविकता है। स्त्री का संपूर्ण समर्पण परिवार के प्रति होता हैश 'मंगलेश डबराल' तारे के प्रकाश की तरह कविता में कहते हैं–

''स्त्री की देह उसका घर है
वह बिखरी हुई चीजों को सहेजती है
तस्वीरों और दीवारों की धूल साफ करती है

कपड़े तहाकर रख देती है।
वह अपने भीतर थामे हुए रहती है टुटते पहाड़ों
बिफरती नदियों और बहते और मंडलो को
वह कुछ कहती है या सर झुकाये हंसती है
या उसके आंसू कुछ देर फर्श पर चमकते हैं।''

सामाजिक मान्यताओं के बोझ से स्त्री शुस्क, निर्मम एवं निणर्यहीन बन गई हैं। स्त्री अस्तित्व को पुरुषों के अधीन ही होना पड़ता है यह हमारे समाज की वास्तविकता हैं। पुरुषों के अलावा न उसकी कोई संवेदना है न उसकी कोई भावना हैं। पुरुषों के निर्णयों का अंध अनुकरण करना यह स्त्री की नियति बन गई हैं। पुरुषों ने स्त्री को प्रश्न पूछने का भी अधिकार नहीं दिया हैं। प्रश्न पूछने वाली, निर्णय लेने वाली स्त्री पुरुषों को अभ्रद लगती हैं और ईशारों पर नाचने वाली स्त्री पतिवृत्ता। स्त्री जीवन की इस वास्तविकता 'मंगलेश डबराल' ने उघाड़ा है–

''सारा दिन काम करने के बाद
एक स्त्री याद करती है
अगले दिन के काम
एक आदमी के पीछे
चुपचाप एक स्त्री चलती है
उसके पैरों के निशाने पर
अपने पैर रखती हुई
रास्ते भर नहीं उठायी निगाह।''

जन्म से लेकर मृत्य तक स्त्री के हिस्से में केवल परिश्रम एवं कष्ट ही आये है सबको खुश रखने वाली स्त्री कभी खुश नहीं रह पाती हैं परंतु वैश्वीकरण के कारण रोजगार में वृद्धी हो गई, स्त्री शिक्षित एवं संचेत हो गई। अपने अधिकारों के प्रति सजग हो गई। अन्याय, अत्याचार एवं शोषण के विरोध में आवाज उठाने लगी जिसकी सशक्त, अभिव्यक्ति समकालीन कविता में दिखाई देती हैं। कविता के माध्यम से स्त्री वेदना एवं विषम परिस्थिति को उघाड़ना और अन्य स्त्रियों को संचेत, जागृत करने का दायित्व कविता ने निभाया। स्त्री साहित्य के माध्यम से अपनी आवाज बुलंद करने लगी। अब स्त्री व्यवसाी से प्रश्नकर रही हैं। अपने अधिकारों के लिए लढ़ रही है शोषन एवं अपमान के विरोध में खड़ी हो रही है। अब स्त्री निसाध्य होकर सब कुछ सहन नहीं कर रही हैं वह भी आक्रोश, संघर्ष एवं विरोध कर रही है। पुरुषों के अंधअनुकरण को छोड़ इन स्त्री अस्तित्व क्षमता एवं सामर्थ्य से परिचित हो गई है। वह सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त विकृतियों के विरोध में

आवाज बुलंद कर रही हैं। स्त्री की इन बदलती सोच को कविता में उघाड़ा गया है। परंपरा, सभ्यता एवं मान्यताओं की कुलूषित जंजीर को तोड़कर स्त्री अपनी पहचान बनाने में सफल हो रही है। नारी को इस नई सोच को निर्मला पुतूल ने उघाड़ा है–

"मैं चुप हूं तो मत समझो कि गूंगी हूं।
या कि रखा हैं मैंने अजीवन मौन–वृत्त
गहराती चुप्पी के अधेरे में सुलग रही है भीतर
जो आक्रोश की आग
उसकी रोशनी में पढ़ रही हूं
तुम्हारे खिलाफ अकेले लड़ने के खतरों का खेल
पर याद रखो
तुम्हारे मानसिकता की पचोदी गलियों से गुरजती
मैं तलाश रही हूं तुम्हारी कमजोर रसें
ताकि ठीक समय पर
ठीक तरह से कर सकूं हमला
और बता सकूं सरेआम गिरेबान पकड़
कि मैं वो नहीं हूं जो तुम समझते हों।"

हिंदी की समकालीन कविता में स्त्री जीवन की त्रासदी का एवं उनकी संवेदनाओं का जीवन्त चित्रण किया गया है। स्त्री पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार, शोषण, एवं अवमानना को कविता में उघाड़ा गया है। परंपरा, सभ्यता, मान्यताओं, रूढ़ि एवं प्रथा के नामपर स्त्री का समाज व्यवस्था द्वारा किस प्रकार शोषन किया जाता हैं इस वास्तविकता को भी अभिव्यक्त किया है। स्त्री अस्तित्व को किस प्रकार नकारा जाता हैं और उनपर पुरुष मानसिकता एवं अधिकारों को थोपा जाता है इसको भी वाणी प्रदान करने का कार्य समकालीन कविता ने किया है। नारी को उपभोग की वस्तु मात्र मानकर उसे संतती, परिवारिक काम एवं शरीर सुख तक सीमित रखा गया है। समकालीन कविता में अन्याय के विरोध में आवाज बुलंद करने वाली, अपने अधिकारों के लिए लड़नेवाली तथा पुरुष सत्ता के व्यवस्था से अक्रांत होकर प्रश्न पूछनेवाली स्त्री भी दिखाई देती है। अपनी भोगी हुई पीड़ा को उघाड़कर स्त्रियों को सचेत कर मागदर्शन करने का कार्य भी बखुबी किया गया हैं समाज की धार्मिक स्थिति से पनपी कुंठिन मानसिकता को उघाड़कर स्त्री अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास समकालीन कविता में किया है।

आवाज बुलंद कर रही हैं। स्त्री की इन बदलती सोच को कविता में उघाड़ा गया है। परंपरा, सभ्यता एवं मान्यताओं की कुलूषित जंजीर को तोड़कर स्त्री अपनी पहचान बनाने में सफल हो रही है। नारी को इस नई सोच को निर्मला पुतूल ने उघाड़ा है–

"मैं चुप हूं तो मत समझो कि गूंगी हूं।
या कि रखा हैं मैंने अजीवन मौन–वृत्त
गहराती चुप्पी के अधेरे में सुलग रही है भीतर
जो आक्रोश की आग
उसकी रोशनी में पढ़ रही हूं
तुम्हारे खिलाफ अकेले लड़ने के खतरों का खेल
पर याद रखो
तुम्हारे मानसिकता की पचोदी गलियों से गुरजती
मैं तलाश रही हूं तुम्हारी कमजोर रसें
ताकि ठीक समय पर
ठीक तरह से कर सकूं हमला
और बता सकूं सरेआम गिरेबान पकड़
कि मैं वो नहीं हूं जो तुम समझते हों।"

हिंदी की समकालीन कविता में स्त्री जीवन की त्रासदी का एवं उनकी संवेदनाओं का जीवन्त चित्रण किया गया है। स्त्री पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार, शोषण, एवं अवमानना को कविता में उघाड़ा गया है। परंपरा, सभ्यता, मान्यताओं, रूढ़ि एवं प्रथा के नामपर स्त्री का समाज व्यवस्था द्वारा किस प्रकार शोषन किया जाता हैं इस वास्तविकता को भी अभिव्यक्त किया है। स्त्री अस्तित्व को किस प्रकार नकारा जाता हैं और उनपर पुरुष मानसिकता एवं अधिकारों को थोपा जाता है इसको भी वाणी प्रदान करने का कार्य समकालीन कविता ने किया है। नारी को उपभोग की वस्तु मात्र मानकर उसे संतती, परिवारिक काम एवं शरीर सुख तक सीमित रखा गया है। समकालीन कविता में अन्याय के विरोध में आवाज बुलंद करने वाली, अपने अधिकारों के लिए लड़नेवाली तथा पुरुष सत्ता के व्यवस्था से अक्रांत होकर प्रश्न पूछनेवाली स्त्री भी दिखाई देती है। अपनी भोगी हुई पीड़ा को उघाड़कर स्त्रियों को सचेत कर मागदर्शन करने का कार्य भी बखुबी किया गया हैं समाज की धार्मिक स्थिति से पनपी कुंठिन मानसिकता को उघाड़कर स्त्री अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास समकालीन कविता में किया है।